शंकुक का रस विषयक मत

एम्.ए – II सेमेस्टर

डॉ उमा शर्मा
अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
एन.ए.एस (पी.जी.) कॉलेज, मेरठ

(२) श्री शङ्कुक का रस संबंधी मन्तव्य

रस-सूत्र के द्वितीय व्याख्याकार आचार्य शङ्कुक के मतानुसार विभाव आदि के द्वारा अनुभाव्य, अनुमापक रूप संबंध से स्थायी रूप रस की नट में अनुमिति होती है। इसी हेतु यह मत रसानुमितिवाद कहलाता है।

यह मत न्याय-सिद्धांत पर आधारित है। इस सिद्धांत के अनुसार सामाजिक की रसानुभूति में चार सोपान कहे जा सकते हैं।

1) **नट मे राम की प्रतीति** - जिस प्रकार चित्राङ्कित अश्व में बालकों को 'यह घोड़ा है' ऐसी प्रतीति होती है, उसी प्रकार सामाजिकों को नट में 'रामोऽयम' यह प्रतीति हो जाती है। अतः नट मे राम की प्रतीति चित्रतुरगन्याय से होती है। जो कि दर्शनशास्त्र में मानी गई चार प्रकार की प्रतीति सम्यक, मिथ्या, संशय और सादृश्य प्रतीति से पृथक है।

2) **कारण कार्य सहकारी मे विभावादि - व्यपदेश** (महत्व)

नट श्रृङ्गारादि रस के काव्य का पाठ करता है और सहृदय सामाजिक उस काव्य के अर्थ की साक्षात् सी अनुभूति कर लेते है तथा नट अपनी शिक्षा एवं अभ्यास कौशल से अभिनय द्वारा नायकगत रति आदि भाव के कारण नायिका आदि कार्य भ्रूक्षेप आदि सहकारी निर्वेद आदि को प्रकट करता है वस्तुतः सभी कृत्रिम होते है। किन्तु सामाजिक इनको कृत्रिम नही समझते और काव्य तथा नाटक मे उनको विभाव, अनुभाव तथा सञ्चारी भाव के नाम से व्यवहृत करते है।

3) विभावादि द्वारा नट में स्थायी रति आदि का अनुमान — संयोग का अर्थ है — गम्यगमकभाव संबंध। गम्य का अर्थ है — जिसको जानना है। गमक से तात्पर्य है जिसके द्वारा जाना जाता है। विभाव आदि के होने पर रति आदि भाव अवश्य होता है — इस प्रकार के व्याप्ति रूप संबंध से विभावादि के द्वारा नट में रति आदि भाव का अनुमान कर लिया जाता है।

4) सामाजिकों द्वारा रसचर्वणा — अविद्यमान रति आदि भाव का ही नट में अनुमान किया जाता है। यह अनुमीयमान रति आदि भाव सौन्दर्ययुक्त वस्तु होने से आस्वादनीय है। इसी हेतु सामाजिकगण अपनी धारावाहिनी इच्छा (वासना) के द्वारा इसका आस्वादन करते हैं। नाट्य में अनुमित सामाजिक द्वारा आस्वाद्यमान रति आदि भाव ही रस है।

इस मत का सारांश यह है - जैसे कुहरे से आच्छन्न प्रदेश में धूम की भ्रान्ति होने से धूम के साध्य नियम से रहने वाली अग्नि का अनुमान हो जाता है। इसी प्रकार नट द्वारा स्वकौशल से (ये विभावादि मेरे हैं। इस प्रकार प्रकटित, वस्तुतः अविद्यमान विभाव आदि से व्यापक रति आदि का अनुमान कर लिया जाता है उसी नट में अनुमीयमान रति का अपने सौन्दर्य के कारण सामाजिकों द्वारा आस्वादन किया जाता है और वह रस रूप कही जाती है अतएव शङ्कुक के मतानुसार रसानुमिति ही रसनिष्पत्ति है।

रसानुमितिवाद में दोष - प्रथम तो यहाँ अनुमिति के हेतु आदि सभी काल्पित है तथा नट में स्थायी भाव की संभावना मात्र है यदि रति आदि की अनुमिति भी हो जाये तो वह सामाजिक के हृदय में चमत्कारोत्पादक न होगी, क्योंकि प्रत्यक्ष अनुभूति ही चमत्कारदायक होती है।

द्वितीया बात यह है कि लोकप्रसिद्ध में रस का साक्षात् अनुभव ही सिद्ध होता है अनुमिति नहीं।

तीसरा दोष यह है कि जब सामाजिक को यह निश्चित हो जाता है कि ये वस्तुतः सीता आदि नहीं है तब तो नट में रति आदि भाव की अनुमिति न होगी और सामाजिक को रसास्वादन न हुआ करेगा।